© 2018 IJSRST | Volume 4 | Issue 5 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X

युगीन स्पन्दन का गीतिकाव्य ''भाति में भारतम्''

डॉ0 (श्रीमती) मधु सत्यदेव

एसोसिएट प्रोफेसर

संस्कृत विभाग

दी0द0उ0 गेरखपुर विश्वविद्यालय

गोरखपुर

भारतं वर्तते मे परं सम्बलं

भारतं नित्यमेव स्मरामि प्रियम

भारतेनास्ति मे जीवनं जीवनं

भारतायार्पितं मेऽखिलं चेष्टितम्[1]

इन पंक्तियों के गायन में भारतभूमि के प्रति प्रतिबद्धता व्यक्त करने वाले परम श्रद्धेय डा0 रमाकान्त शुक्ल निस्संदेह भारतामाता के सच्चे सपूत हैं। उनका मन उनकी लेखनी और उनकी समस्त चेष्टाएँ इस वसुन्धरा में ही विश्राम प्राप्त करती हैं। परन्तु इसका यह अभिप्राय यह कदापि नहीं हैं कि उनका देश के प्रति सौन्दर्य, देश–प्रेम अपने देश तक ही सीमित है। सकारात्मक दृष्टिकोण को अपनाते हुए शुक्ल जी ने जिस किसी देश का यात्री हो अपनी रचना में सच्चे दिल

से स्वीकार किया। विश्व फलक पर अपनी उपस्थिति दर्ज कराने वाली शुक्ल जी की रचनाएँ इसका प्रमाण है।

आपके प्रकाशित ग्रन्थों में यद्यपि गद्य एवं पद्य दोनों ही समाविष्ट है, परन्तु पद्य में आपकी आत्मा बसती है। ध्वनि लय और शब्दों का तालमेल एक ऐसी खनक उत्पन्न करता है कि सभागार झंकृत हो उठता है। श्रोतावृंद के हाथ और पैर आपके गायन के साथ तालबद्ध हो जाते है। आपके गायन में जीवन्तता है, परम्परा है, हमारे देश का इतिहास, भूगोल संरक्षित है। अपने सकारात्मक चिन्तन में कबीर जैसी फक्कड़ता और निराला जैसी ओजस्विता है।

भाति में भारतम् यह काव्य 1980 में देववाणी देहली से प्रकाशित है यद्यपि यह रचना राष्ट्रभक्ति से युक्त भारत के समग्र स्वरूप, वैशिष्ट्य को उपस्थापित करती है। कवि समवायों में इस काव्य का ध्रुवक प्रयोग सहित गायन, दूरदर्शन आदि में गायन के साथ प्रसार भी गीति काव्य के स्वरूप को धारण करता है। इसमें 108 श्लोक है।

गीयते इति गीति काव्यम् यह व्यत्पत्ति गानं ध्रुवकं बिना।

इस प्रकार ध्रुवक यह प्रयोग से यह काव्य गीति काव्य को सिद्ध करता है। यह गीति काव्य भाव प्रधान अन्तरात्मा की अभिव्यक्ति, कोमल भाव, मधुर संगीत, लयताल का समन्वय समसामयिक विषय, ध्रुवक प्रयोग एवं मनोरम छन्दों का रमणीय संगम युक्त यह काव्य है।

प्रत्येक व्यक्ति का अपना ढंग अपनी प्रस्तुति और अपनी अदा होती है। वह अपनी उसी अदायगी से एक पहचान बनाता है। डॉ0 रमाकान्त शुक्ल की पहचान 'भाति मे भारतम्' है। आप मंच पर यदि यह कहें कि अब हम काव्य पाठ के लिए आमन्त्रित करते हैं 'भाति में भारतम्' को। तो दर्शक स्वयं समझ जायेंगे कि अब आपका काव्य पाठ होगा। आप और भारत एक दूसरे के पूरक बन गये हैं। आपका यह विश्वास है कि भारत के पास उसका सुदृढ़ अतीत है, परम्पराएँ

हैं और संस्कारों की विरासत है, अतः दुविधा कहीं नहीं है। बाधाएँ कितनी ही आएँ भारत की जनता में सामर्थ्य है सब कुछ सहने की। उसकी यही सहिष्णुता विश्व का मस्तक उसके चरणों में झुका देती है।

सहिष्णुता हमारी ताकत है, कायरता नहीं। हमारी हस्ती न मिटी है और न मिटेगी क्योंकि हम अहिंसा के बल पर एक सत्ता को पलट सकते हैं ऐसी भावना जब रोम–रोम में गूँजती है तो सिंह की हुँकार को ही जन्म देती है।

वास्तव में शुक्ल जी विशुद्ध भारतीय हैं। भारतवर्ष की किसी भी बुराई से कोई शिकवा नहीं है उसके कर्णधारों से कोई शिकायत नहीं है क्योंकि वे जानते हैं कि भारत की मिट्टी पानी और हवा में चरित्र बदल देने की शक्ति है। ये बुराइयाँ मिटेंगी अवश्य। क्योंकि इस गंगा जमुनी संस्कृति में समाज की विद्रूपताओं से लड़ने की ताकत है।

हाँ! ऐसा भी नहीं है कि शुक्ल जी समाज की विसंगतियों पर पूर्णतः मूक बने रहे हों। वे भारतवर्ष के नकारात्मक पक्ष से भी आहत हैं। बस कहने का ढंग अलग है। उसमें अन्य कवियों की भाँति आवेश, क्रोध घृणा और विरक्ति नहीं है अपितु उसे सुधार लेने का संकल्प है। उन्हें विश्वास है कि भले ही हम निन्दा करें या स्तुति हमारा विकासशील देश अवश्य विजय प्राप्त करेगा। वे मुस्कराते हैं व्यंग्य से और कहते हैं उन कवियों से जो उन्हें स्तुति काव्यकार के रूप में ही देखते हैं ''भइया मैं शायद मन्दबुद्धि हूँ इसलिए दोष मुझे दिखाई नहीं देते।''[2]

परन्तु आपकी कुछ रचनाएँ आपके इस मिथक को तोड़ती है। 'राष्ट्रदेवते रचना में कवि ने स्वयं राष्ट्र से ही पूछा है कि हे राष्ट्रदेवता तुम्हारा पूजन अर्चन में कैसे करूँ ? जहाँ चीत्कार है वहाँ भजन कैसे सुनेगा ? जहाँ एकता का सूत्र नहीं है वहाँ माला कैसे बने ? जहाँ पीने का पानी बिकने लगा वहाँ स्नान के लिए जल कहाँ से लाऊँ ? जहाँ नववधू दाह का क्रन्दन

है वहाँ तुम्हारा स्तुति पाठ कैसे करूँ ? जहाँ द्वेष के प्रबल झंझावत है वहाँ दीपक कैसे जलाऊँ ? जहाँ मुझे एक भी व्यक्ति भूखा दिखाई दे वहाँ मैं तुझे कैसे भोग लगा सकता हूँ ? जहाँ धन का भण्डार है परन्तु निर्धन यथावत हैं ऐसे असामंजस्य में मैं पूजन के अन्त में तुम्हें दक्षिणा कैसे दूँ ? और अन्त में कवि अपनी स्पष्ट शब्दों में कहते हैं शायद मैंने बहुत कटु बातें कह दी हों परन्तु बुरा मत मानना मैं प्रारम्भ में तुम्हें 'भाति में भारतम्' की मिठाई खिला चुका हूँ। यदि कड़वा कहा हो तो क्षमा करना।[3]

नवप्रतीकों के अदायगी। जो शुक्ल जी को अन्य कवियों से इतर पहचान देती है।

इसके अतिरिक्त 'रौति ते भारतम्' के प्रसंग में कवि ने स्वयं स्वीकार किया है कि सामान्य लोगों की मुझसे शिकायत है कि भारत जनता रो रही है, व्यथित है, पीड़ित है, देश में चारों ओर भ्रष्टाचार और विद्वेष की आँधी चल रही है और तुम 'भाति में भारतम्' का गीत गा रहे हो। क्या तुम्हारे पास इसका कोई उत्तर है ? लगभग सोलह शब्दों में दूसरों के द्वारा कही गयी व्यथा कथा के प्रत्युत्तर में वह एक ही छन्द कहते है।[4]

वे तो यही मानते हैं कि सब कुछ सब जगह अच्छा नहीं कहीं कुछ कमी है कहीं कुछ। इसलिए उस कमी में भी पाने की तमन्ना के साथ जाओ।[5]

आदरणीय शुक्ल जी के कतृत्त्व पर उनके व्यक्तित्व की स्पष्ट छाप परिलक्षित होती है। बात को सीधे कहने की आदत से कभी–कभी वे उलाहने का पात्र भी बन जाते हैं। उनकी एक रचना 'सर्वशुक्ला' की अन्तिम कविता 'कि कुर्यात' हास्य व्यंग्य शैली से ओत प्रोत है। विभिन्न परिस्थितियों में अपनी मजबूरी को कहते हुए वे पाठक को गुदगुदाते हैं। आपकी इस रचना में ताजगी है और मंच की दृष्टि से यह एक सशक्त कविता कही जा सकती है [6]

'घर से निकले थे समय पर उनसे मिलने के लिए गैर की गपशप में हो गई देर तो हम क्या करें ?[7]

जीवित मिले या मृत मिले लादेन मिलना चाहिए यदि प्रतिज्ञा हुई निष्फल बुश बिचारा क्या करे ?

आपकी इस प्रकार की कुछ रचनाएँ लीक से हटकर हैं। सम्भवतः स्वाद परिवर्तन के लिए ऐसे प्रयोग आवश्यक भी हैं और उपादेय भी।

'तुरोनो स्मृतिसपादशतकम्' को एकादश विश्वसंस्कृत सम्मेलन की 'डायरी' कहा जा सकता है। जिसे पढ़कर आप इटली देश की इस संगोष्ठी का आनन्द ले सकते हैं। इसमें संस्कृत सम्मेलन की झाँकी को क्रमबद्ध रूप में चित्रित किया है। संगोष्ठी के प्रत्येक सत्र का उल्लेख करते हुए केवल शैक्षिक सम्मेलन का वर्णन आपके लिए पर्याप्त नहीं है। आप इस देश में जहाँ–जहाँ धूमे, उसका सचित्र वर्णन आपने इस पुस्तक में किया है। सेण्टमार्क का चौकोर आंगन, वासिलिक चर्च, अत्यन्त खूबसूरत पेरिस नगरी का एफिल टावर, ऐसे विदेश को घूमने के बाद भी जब भारत के सच्चे सूपत ने अपने देश की भूमि पर पदार्पण किया, तो उनके मुख से यही निकला।[8]

डॉ0 शुक्ला की सृजनशीलता प्रायः अभिधामयी हैं यद्यपि वर्णनों में विविधता अलंकार प्रियता और सरसता है परन्तु प्रायः उनकी रचनाएँ व्यंजना रहित होती है। जैसी बात वैसी प्रस्तुति । अपनी इसी शैली के कारण वे कभ–कभी विद्वत् समुदाय में संकेतित किये जाते हैं। परन्तु कबीर जैसे फक्कड़ कवि को कोई परवाह नहीं उन्होंने तो जैसा देखा वैसा कहा दिया।[9]

वर्णनात्मक शैली के कवि रमाकान्त जी की आत्मा वर्णनों में ही विश्राम पाती है। भले ही वह विमान में बैठने की अनुभूति हो अथवा संगमक्षेत्र के महाकुम्भ का आनन्द वीरों की भूमि राजस्थान का भ्रमण हो अथवा उज्जयिनी की ऐतिहासिक कथा हो आद्योपांत वर्णन के बाद ही उनकी लेखनी विराम लेती है। हाँ कहीं–कहीं अलंकारिक वर्णन करके उन्होंने स्वयं के ऊपर लगे हुए सपाट कवि के दोष से भी मुक्त होने का प्रयास किया है।[10]

परन्तु प्रायः उनकी रचनाओं में कवि मंच को बाँधने की ताजगी है। वे लयबद्ध कविताओं के प्रयोग में अधिक सफल है। कहीं–कहीं तो ऐसा प्रतीत होती है कि शब्दों की बाजीगरी से छन्द का निर्माण किया गया है।[11]

यद्यपि यहाँ व्यंग्य की अनुभूति है परन्तु शब्दों की गति अधिक आनन्ददायी हे।

इतने सबके बाद भी लोकप्रियता के उच्च पायदान पर स्थापित आपकी रचनाएँ प्रत्येक कवि सम्मेलनों में सराही जाती है आप में श्रोताओं को अपना अनुगामी बनाने का इन्द्रजाल है। 'सर्वशुक्ला' की भूमिका में आपने अपना पक्ष प्रस्तुत करते हुए कहा है कि आज जब देश आपराधिक प्रवृत्ति से आवेष्टित है, अपवंचनाओं की गाथाएँ नित्य समाचार पत्रों में प्रकाशित हो रही हैं ऐसे में भारत के सद्‌गुणों की चर्चा प्रासंगिक है। बुराई को भलाई से काटना ही तो चमत्कार है और आप इसमें पारंगत हैं। विश्व में आतंकवाद का घोर ताण्डव देखकर आपके मन की व्यथा का कविता में परिणित हो जाना स्वाभाविक है। जिस आतंक को अब तक भारत भोग रहा था अब वह विकराल होकर विश्व पर छा गया है।[12]

अतः प्रभु से यही कामना है कि विश्व में शान्ति हो और साधुओं की रक्षा एवं दुष्टों का विनाश हो।[13]

देश के कर्णधार सुरक्षा के प्रश्न पर मौन हैं ? जनता के सामने सद्भावना यात्रा के ढोंग किए जा रहे हैं। बुद्धिजीवी किंकर्तव्यविमूढ़ हैं। प्रजातंत्र का स्वांग करके आपराधिक प्रकृति के लोग देश के भाग्यविधाता बन रहे हैं। देश की चिन्ता किसी को नहीं है इसी पृष्ठभूमि पर अपने 'वन्दनीयास्ते' कविता लिखी है। इसमें आपके अन्तर्मन की पीड़ा झलकती है।[14]

कवि को चेतनाशील देश के रक्षकों से ही शिकायत नहीं है अपितु जब अचेतन प्रकृति भी अपनी कृपावृष्टि से सृष्टि को वंचित करती है तो उसे भी उलाहना देने में वे नहीं चूकते। 'मेघप्रबोधनम्' एवं अकालजलद् इसी प्रकार की रचनाएँ हैं। वे अपने रोष को व्यक्त करते हुए कहते हैं कि क्रूर हृदय मेघ! तुम कैसे सो रहे हो, इस पृथिवी का क्या अपराध है जो तुम इसे अपने जल से सिंचित नहीं कर रहे हो। सत्य भी है मेघ का तो जन्म ही परोपकार के लिए हुआ है।[15]

छन्द की दृष्टि से कवि ने स्रग्विणी छन्द के प्रति अधिक अनुराग व्यक्त किया हैं 'भाति मे भारतम्' की गेयता का श्रेय इस छन्द की मसृणता को भी जाता है। गेयता धर्म के कारण यह रचना सर्वाधिक सराही जाती रही है।

डॉ0 शुक्ल ने 'जयभारतभूमे' के सात खण्डों में ताटड़्क, भुजङप्रयात, आर्या, छन्दों का प्रयोग किया है। इससे इस काव्य की गेयता को चार चाँद लग गये हैं।[16]

उनकी कविताओं के किसी भी अंचल पर दृष्टिपात करें तो सौंधी मिट्टी की गंध से ओतप्रोत पायेंगे उसे। वहाँ आपको मिलेगा बसन्त का उल्लास, तरुण बादलों की चपल क्रीड़ा, विज्ञान के चमत्कार, पीली ओढ़ी पहने पृथिवी, कृष्णकटाक्ष से युक्त ब्रजभूमि और संस्कारों से पल्लवित पुष्पित भारतीय जनता। उनका सम्पूर्ण साहित्य भारतीय संस्कृति का निदर्शन है। यदि

किसी जिज्ञासु को भारतवर्ष के विषय में सूक्ष्म दृष्टि चाहिए तो उसे शुक्ल जी के साहित्य से ऋण लेना होगा। उसे वहाँ वह सब मिलेगा जो वह इस वसुन्धरा के विषय में जानना चाहता है।

डॉ0 शुक्ल का सम्पादन भी बहुत सशक्त और सामयिक है। 'अर्वाचीन संस्कृतम्' का प्रकाशन बिना व्यवधान से जिस अनवरत गति से चल रहा है वह निस्संदेह प्रशंसनीय है। संयुक्त अंकों को यथा समय निकालना अलग बात है परनतु समय से पूर्व निकालना चमत्कार है। और संस्कृत जगत् आपके इस चमत्कार को नमस्कार करता है। जैसे ही घटना घटती है 'अर्वाचीन संस्कृतम्' से सर्वप्रथम उसकी गूँज सुनाई देती है यही एक पत्रिका की श्रेष्ठता और सफलता की कसौटी है। इस प्रकार डॉ0 शुक्ल ने केवल एक श्रेष्ठ रचनाकार राष्ट्रीय कवि, विश्वभ्रमण शील साधक और सरल व्यक्तित्व के धनी ही नहीं है अपितु एक श्रेष्ठ सम्पादक भी हैं। उनमें गुरुता, विद्वता और श्रेष्ठता का किंचित भी अभिमान नहीं है। उनमें सरलता है ऋजुता नहीं, विनम्रता है उद्दड़ता नहीं, उदारता है कृपणता नहीं और व्यक्तित्वशीकरण है परन्तु सम्मोहन नहीं।

वस्तुतः डॉ0 शुक्ल ने इस परम पवित्र वसुन्धरा की श्रेष्ठता का परचम न केवल देशभर में लहराया है अपितु सम्पूर्ण विश्व को इसकी श्रेष्ठता के समक्ष नतमस्तक करने के लिए बाध्य किया है। वे अपनी न्यूनताओं को भी सुधार के संकल्प में बाँधकर प्रस्तुत करते हैं। फलतः अपने सकारात्मक दृष्टिकोण से जन चेतना की मशाल लिए इस सिपाही को शत्–शत् नमन।

सन्दर्भ:–

1. भारतं वर्तते मे परं सम्बलं
   भारतं नित्यमेव स्मरामि प्रियम
   भातरंनास्ति मे जीवनं जीवनं
   भारतायार्पितं मेऽखिलं चेष्टितम (भाति में भारतम्)

2. सन्तु दोषा अनेकेऽत्र कैश्चिन्मताः

किनतु नाहं प्रपश्यामि तान्मन्दधी

वन्दनीयं मया कीर्तनायं मया

मोदतां वर्धतां राजतां भारतम् (भाति में भारतम्)

3. मिष्टार्पितं पुरैव 'भाति भारतं' हि ते

यन्मया कटूक्तमत्र तत्क्षमस्व देवते। (भाति में भारतम्)

4. यत्त्वया कीर्त्यते दोष जातंसखे

तन्मया सूचितं ह्येकपद्येपुरा (भाति में भारतम्)

दोषवर्जमया सदगुणा संचिता

स्तेन प्रोक्तं मया भाति में भारतं।

5. रहने दे आसमा अब जमीं की तलाश कर

सब कुछ यहीं है न कहीं और तलाश कर।

सब आरजू हों पूरी तो जीने का क्या मजा

जीने के लिए तो बस एक कमी की तलाश कर।।

(भाति में भारतम् अनुवाद)

6. गृहादचलं भवन्तं दृष्टुकामोऽहं यथाकालम्

परं मार्गेऽमिलज्जामो विलम्बो कोऽत्र किं कुर्यात् ?। (भाति में भारतम्)

7. मृतो वा जीवितो वापेक्ष्यते न्याय लोदन

प्रतिज्ञायापि नो लभते बुशसतं चेत्स किं कुर्यात ? (भाति में भारतम्)

8. मातास्माकं धरणी सर्वत्रैवाश्रयोऽस्माकम्

तस्याः स्वास्थ्यं नष्टं वयं कुपुत्राचिकीर्षामः

भ्रष्टाचार–कुपोषण–पर्यावरण प्रदूषण प्रभृति

कृत्वा वयं कुकार्यं मातुः क्लेशं सदा कुर्मः

मा कश्चिदपि धरित्र्याः क्लेशं वर्धिष्णुरस्तु कुत्रापि (भाति में भारतम्)

इत्यनया भावनया दिल्लीभूमिं ववन्देऽहम् (सर्वशुक्ला, पृ0–295)

9. इदं विवरणं सत्यमत्युक्तिरहितं शिवम्

पद्यरूपस्थितं भूयात् तोषार्थ संस्कृतात्मनाम्। (सर्वशुक्ला, पृ0–297)

10. रविकरचुम्बितकलमविलासैःमदकलसारसनादैः

मालविकानां सुमधुरहासैः विबुधशिरोमणिवादैः (सर्वशुक्ला, पृ0–171)

अन्यत्र –

हारास्तारास्तवला गुटिका भाण्डसमूहा भव्याः

पुष्पस्तबकाः शेखरहारा मालानव्या नव्याः (सर्वशुक्ला, पृ0–169)

11. अयोग्यता पदोन्नत, सुयोग्यता पदच्युता,

अमोघलाभ कारिणी मता च चाटुकारिता।

इयं स्थितिर्विलोक्यते यदा, तदा मम स्थिति,

सुपुष्टतां भजेत्कथं ? भविद्धरेव कथ्यताम्।। (सर्वशुक्ला, पृ0–181)

12. चिरादातंकपीड़ा यानुभूता भारतेन वै

सानुभूता किलेदानीं पाश्चात्त्यै राष्ट्रनायकैः (सर्वशुक्ला, पृ0–309)

13. आतंकवाद उच्छिनो जायताम् जगतीतलालत्

परित्राताः साधवः स्युर्दुष्कृतः स्युर्विनाशिताः (सर्वशुक्ला, पृ0–310)

14. रमाकान्त! व्यथां देशस्य विश्वस्याथ निजकृत्यैः

जना ये वर्धयन्ति प्रत्यहं किं वन्दनीयास्ते ? (सर्वशुक्ला, पृ0–237)

15. यथासमयमस्तु ते जलद ! गर्जनं वर्षणम्

यथासमयमस्तु ते समुदयस्तथा विश्रमः

जगज्जनसुरंनो भव न वै जगत्त्रासकः

परोपकरमव्रतं वृणु पयोद! कल्याणदम् (सर्वशुक्ला, पृ0–200)

16. शेष महेश दिनेश सुरेश

रमेश प्रदर्शित निजलीले

मधुकैटभ दशवदन कंसमुर

वृत्रासुर शिशुपार कले

शिवदधीचि प्रह्लाद हरि

श्चन्द्रादि चरित्रोज्ज्वल शोभे!

जय जय जय हे भारतभूमे!

जय जय जय हे भारतभूमे!